शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
E ISSN 2320 – 0871
17 सितम्बर 2025
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

भक्तिकालीन साहित्य में प्रकृति सौंदर्य

अभिषेक मिश्रा (शोधार्थी)
हिन्दी विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय
लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

हिन्दी साहित्य में रचनाकारों ने अपनी रचनाओं में मानव जीवन एवं संसार के विभिन्न पहलुओं को आधार रूप में ग्रहण करते हुए अपनी कल्पना को मूर्त रूप प्रदान करने का प्रयास किया है। इन रचनाओं में रचनाकारों की गहन चिंतनदृष्टि और उत्कृष्ट रचना कौशल के साथ उनकी सुन्दर कल्पनाशीलता का परिचय प्राप्त होता है। मानव एवं प्रकृति का सदैव से ही घनिष्ठ संबंध है। मानव अपने जन्म के साथ ही प्रकृति के सम्पर्क में आता है तथा प्रकृति की गोद में रहकर ही अपने विकास के शिखर को प्राप्त करता है। भक्तिकाल के साहित्य में संसार के विभिन्न लौकिक एवं अलौकिक पक्षों को ध्यान में रखकर रचनाकारों ने काव्य का सृजन किया है। भक्तिकाल के रचनाकारों की लेखनी की पहुंच बहुत दूर तक है, जो भक्तिकाल के साहित्य को विविध रचनात्मक आयामों से जोड़ने का कार्य करती है। भक्तिकाल के साहित्य में प्रकृति के सौंदर्य वर्णन की समृद्ध परंपरा विद्यमान है। इस काल की रचनाओं में प्रकृति के सौंदर्य वर्णन के साथ ही प्रकृति को मानव के विभिन्न मनोभावों तथा काव्य सौंदर्य के विविध आयामों जैसे: आलम्बन, उद्दीपन, अलंकरण, वातावरण, मानवीकरण, वस्तु वर्णन और नीति वर्णन आदि से जोड़कर रचनाकारों ने अपने उत्कृष्ट रचना कौशल का परिचय दिया है। भक्तिकाल के साहित्य में प्रकृति के सौंदर्य वर्णन एवं प्रकृति सौंदर्य वर्णन के विविध आयामों पर ध्यान केंद्रित करना ही इस शोध आलेख का मुख्य उद्देश्य है।

बीज शब्द : सांवेगिक, समायोजन, आयाम, आलम्बन, उद्दीपन, रचना कौशल, बारहमासा, मानवीकरण वस्तुवर्णन, नीति वर्णन, अलंकरण।

मानव एवं प्रकृति का घनिष्ठ संबंध है। मनुष्य अपने जन्म के साथ ही सर्वप्रथम प्रकृति के सम्पर्क में आता है तथा प्रकृति के साथ स्वयं का समायोजन स्थापित करके अपने मानसिक, सांवेगिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विकास को प्राप्त करता है। प्रकृतिवादी विचारधारा को मानने वाले दार्शनिक मानव का प्राकृतिक वातावरण में विकास करने पर बल देते हैं। प्रकृति को मानव का शिक्षक और अनुभवों के निर्माण की प्रमुख इकाई मानते हुए विजयदान देथा ने लिखा है "प्रकृति मनुष्य की सबसे बड़ी यूनिवर्सिटी है। इस यूनिवर्सिटी से मनुष्य ने कितना सीखा है, कितना सीखता चला आ रहा है और कितना सीखेगा, इसका न तो कोई पार है और न कोई सीमा रेखा ही है।"**1**

प्रत्येक भाषा के साहित्य में सृजनकर्ताओं ने प्रकृति को अपनी रुचि, भावाभिव्यक्ति और प्रसंगों में सजीवता लाने के उद्देश्य से अपनी रचनाओं में महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है। वैदिक साहित्य में प्रकृति से संबंधित ऋचाओं का सुंदर वर्णन अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त में प्राप्त होता है। पृथ्वी सूक्त में वनों, पर्वतों, ऋतुओं, अंतरिक्ष और औषधियों आदि का सुंदर वर्णन किया गया है :

शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
E ISSN 2320 – 0871
17 सितम्बर 2025
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

"गिरियस्ते पर्वता हिमवन्तो अरण्यं ते पृथ्वीस्योनमस्तु
बभ्रु कृष्णां रोहिणीं विश्वरूपा ध्रुवाभूमिं पृथ्वीमिन्द्रगुप्ताम् ।
अजीतो अहतो अक्षतो अध्यष्ठां पृथ्वीमहम्।।"**2**

वैदिक संस्कृत के पश्चात लौकिक संस्कृत में भी महाकवियों ने प्रकृति को अपनी रचनाओं में महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है। महाकवि कालिदास के 'मेघदूत और 'ऋतुसंहार' प्रकृति सौंदर्य के अद्‌वितीय उदाहरण हैं। हिन्दी साहित्य में भी आदिकाल से ही कवियों ने अपनी रचनाओं में भाव एवं घटना-प्रसंगों के आधार पर प्रकृति सौंदर्य का वर्णन किया है। पृथ्वीराज रासो में कवि चंद ने नायिकाओं के सौंदर्य विधान में ऋतुवर्णन के समय प्रकृति चित्रण के द्‌वारा अपने उत्कृष्ट रचना कौशल का परिचय दिया है। कनवज्ज समय में प्रकृति की सुंदरता का वर्णन करते हुए महाकवि चंद लिखते हैं :

कुञ्ज-कुञ्ज प्रति मधुप। पुंज गुंजत वैरनि धुनि।।
ललित कंठ कोकिल। कलाप कोलाहल सुनि-सुनि।।
राजत वन मंडित। पराग सौरंभ सुगंधिन।।
बिकसे किंसुक विहि। कदंब आनंद विविध सुनि।।
परिरंभ लता तरवरह सम। भए समह वर अनंग तिथि।।
बिच्छुरत छिनक सम्पत्ति पति। कंत असंत बसंत रिति।।**3**

भक्तिकाल के साहित्य में भी प्रकृति सौंदर्य का अनुपम वर्णन कवियों की रचनाओं में दृष्टिगोचर होता है। भक्तिकाल के कवियों ने प्रकृति के सौंदर्य का वर्णन स्वतंत्र रूप से नहीं किया है अपितु इस काल की रचनाओं में घटनाप्रसंगों के साथ प्रकृति सौंदर्य का अद्‌वितीय वर्णन प्राप्त होता है। तुलसीदास की रामचरितमानस में, जायसी के पद्मावत् में सूरसागर में, रहीम के दोहों में प्रकृति सौंदर्य एवं काव्य सौंदर्य के विविध आयामों में प्रकृति का सुंदर समन्वय दृष्टिगोचर होता है।

गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस में प्रकृति का वर्णन आलम्बन, उद्दीपन, अलंकरण और वातावरण का चित्रण स्थान-स्थान पर किया है। बालकांड में कामदेव के द्‌वारा भगवान शिव की तपस्या भंग करने के प्रसंग में प्रकृति का वातावरण सौंदर्य के रूप में वर्णन करते हुए लिखा है :

"फिरत लाज कछु करि नहिं जाई। मरनु ठानि मन रचेसि उपाई।।
प्रगटेसि तुरत रुचिर ऋतुराजा। कुसुमित नव तरु राजि विराजा।।
बन उपवन बापिका तड़ागा। परम सुभग सब दिसा विभागा।।
जहं तहं जन उमगत अनुरागा। देखि मुएहु मन मनसिज जागा।।
जागइ मनोभव मुएंहु मन बन सुभगता न परै कहीं।
शीतल सुगंध सुमंद मारुत मदन अनल सखा सही।।
बिकसे सरन्हि बहु कंज गुंजत पुंज मंजुल मधुकरा।।
कलहंस पिंक सुक सरस रव करि गान नाचहिं अपछरा।।"**4**

'रामचरितमानस' में श्रीराम जी के स्वयंवर में अलंकार के रूप में, किष्किन्धाकाण्ड में पम्पासरोवर और पंचवटी के सौंदर्य वर्णन में प्रकृति का आलम्बन रूप में सुंदर चित्रण है। सुन्दरकांड में माता सीता के मनोभावों को सजीवता के साथ प्रकट करने के उद्देश्य से प्रकृति

का उद्दीपन रूप में वर्णन गोस्वामी जी ने इस प्रकार किया है :

"कह सीता बिधि भा प्रतिकूला। मिलहि न पावक मिटहि न शूला।।
देखिअत प्रकट गगन अंगारा। अवनि न आवत एकउ तारा।।
पावकमय ससि स्रवत न आगी। मानहु मोहि जानि हत भागी।।
सुनहि बिनय मम बिटप असोका।सत्यनाम करु हरु मम सोका।।
नूतन किसलय अनल समाना। देहि अगिनि जनि करहिं निदाना।।"**5**

गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपनी रचनाओं में प्रकृति के विभिन्न रूपों का वर्णन भावों एवं शिल्प सौंदर्य के आधार पर किया है। गोस्वामी जी के प्रकृति चित्रण की प्रशंसा करते हुए डॉ.उदयभानु सिंह लिखते हैं, "विभिन्न स्थलों पर काव्य दृष्टि से प्रकृति का चित्ताकर्षक चित्रण करके तुलसी ने यह सिद्ध कर दिया है कि उनमें प्रकृति के सूक्ष्म निरीक्षण और उसके सफल वर्णन की महती शक्ति है।"**6**

भक्तिकाल के साहित्य में प्रकृति वर्णन की समृद्ध परंपरा विद्यमान है। सूरदास जी के सूरसागर में प्रकृति सौंदर्य की अद्भुत योजना के दर्शन हमें प्राप्त होते हैं। सूरदास जी ने व्रजभूमि के प्राकृतिक सौंदर्य का वर्णन गहन अनुभूति के आधार पर किया है। श्रीकृष्ण के वियोग का अनुभव केवल गोपियों तक ही सीमित नहीं है वरन् श्रीकृष्ण के वियोग का अनुभव व्रजभूमि के समस्त जड़ और चेतन प्राणियों को हो रहा है। सूरदास जी ने यमुना नदी का मानवीकरण करते हुए गोपियों की विरहदशा के साथ साम्य स्थापित करते हुए लिखा है :

"देखियत कालिंदी अति कारी। कहियो पथिक! जाय हरि सो ज्यों भई बिरह जुर कारी।।
मनो पलिका पै परी धरनि धंसि तरंग तलफ तनु भारी।
तटबारु उपचार चूर मनो स्वेद प्रवाह पनारी।।
बिलगित कच कुस कास पुलिन मनो पंक जु कज्जल सारी।
भ्रमर मनो मति भ्रमति चहूं दिसि फिरति है अंग दुखारी।।
निसिदिन चकई व्याज बकत मुख किन मानहुं अनुहारी।
सूरदास प्रभु जो जमुना गति सो गति भई हमारी।।"**7**

सूरदास जी के काव्य में प्राकृतिक सौंदर्य के साथ मानवीय मनोभावों, व्रज की प्रकृति के सुंदर दृश्यों उपमाओं का भंडार-सा दिखाई देता है। सूर के प्रकृति वर्णन की विशेषता का उल्लेख करते हुए डॉ.रामरतन भटनागर लिखते हैं, "वास्तव में सूर का काव्य प्रकृति में डूबा हुआ है। कृष्ण का विकास जैसे व्रज की प्रकृति में होता है, उसी प्रकार सूर-साहित्य का विकास व्रज प्रकृति की छाया में ही होता है। व्रज की प्रकृति ने उन्हें केवल उपमाओं और उत्प्रेक्षाओं के लिए ही सामग्री नहीं दी है, वह उनके काव्य के केंद्र में प्रतिष्ठित हुई है।'**8**

भक्तिकालीन हिन्दी साहित्य में बारहमासा वर्णन की परम्परा को उच्चतम शिखर पर स्थापित करने वाले महाकाव्य जायसी कृत 'पद्मावत' में प्रकृति सौंदर्य का अनुपम वर्णन मिलता है। सिंहलद्वीप खंड में वस्तु सौंदर्य का, मानसरोदक खंड में सरोवर, पुष्पों एवं वातावरण के सौंदर्य का वर्णन, नागमती वियोग खंड में प्रकृति के उद्दीपन रूप का सुंदर वर्णन जायसी ने किया है।

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 सितम्बर 2025
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

वस्तु वर्णन की परम्परा का निर्वाह करते हुए सिंहलद्वीप के फलदार वृक्षों का वर्णन जायसी इस प्रकार से करते हैं :

"फरे आंव अति सघन सोहाए। औ जब फरैं अधिक सिर नाए।।

कटहर डार पींड सन पाके। बड़हर सो अनूप अति ताके।।

खिरनी पाकि खांड असि मीठी। जामुन पाकि भंवर असि डीठी।।

पुनि महुआ चुअ अधिक मिठासू।मधु जब मीठए पुहुप जस बासू।।

लंवग सुपारी जायफल सब फर फरै अपूर।

आसपास घन इमली औ घन तार खजूर।।"**9**

भक्तिकाल के साहित्य में रहीम के दोहे भी सर्वसाधारण के मुख पर विराजमान रहते हैं। रहीम ने प्रकृति का वर्णन अधिकतर उपदेश एवं समाज को नीतिज्ञान देने के लिए किया है। रहीम ने प्रकृति के घटना व्यापारों के माध्यम से नीति के सुंदर उपदेश प्रस्तुत किये हैं। थोड़े से जल में मछली के जीवित रहने की कठिनाई को कम लाभ और अधिक खर्च से जोड़ते हुए रहीम ने लिखा है :

"खरच बढ़्यो उद्यम घट्यौ, नृपति निठुर मन कीन।

कहू रहीम कैसे जिएए थोड़े जल की मीन।।"**10**

उपर्युक्त विवेचन पर दृष्टिनिक्षेप करते हुए निश्चय ही कहा जा सकता है कि भक्तिकाल का साहित्य काव्य सौंदर्य और मानवीय भावभूमि के विभिन्न आयामों को स्वयं में समाहित किए हुए है। भक्तिकालीन साहित्य में प्रकृति वर्णन की अद्वितीय परम्परा का विस्तार दृष्टिगोचर होता है। गोस्वामी तुलसीदास, महात्मा सूरदास, जायसी और रहीम के काव्य में प्रकृति से संबंधित वस्तु-वर्णनों, अलंकार योजनाओं, आलम्बन, उद्दीपन और मानवीकरण आदि के अनगिनत चित्र पाठक के सम्मुख उपस्थित होते हैं। भक्तिकाल का सम्पूर्ण साहित्य प्रकृति के मनोहर आंचल से बंधा हुआ दिखाई देता है। यह भी कहा जा सकता है कि भक्तिकाल के साहित्य ने ही अपने अनुवर्ती रचनाकारों को प्रकृति के स्वतंत्र वर्णन की प्रेरणा एवं दृढ़ आधारशिला प्रदान की है।

संदर्भ ग्रंथ

1 देथा विजयदान, साहित्य और समाज, प्रकाशक : वाणी प्रकाशन, पृष्ठ 39

2 संपा. शर्मा आचार्य पं. श्रीराम, अथर्ववेद संहिता, प्रकाशक : ब्रह्मवर्च, शांतिकुंज हरिद्वार, द्वादश कांड, भूमि सूक्त श्लोक 11

3 संपा. द्विवेदी आचार्य हजारी प्रसाद, संक्षिप्त पृथ्वीराज रासो - कनवज्ज समय, प्रकाशक : साहित्य भवन पब्लिकेशन, प्रयाग, पृष्ठ 112

4 गोस्वामी तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकांड, प्रकाशक : गीताप्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 101

5 वही, सुन्दरकाण्ड, पृष्ठ 725

6 सिंह डॉ उदयभानु, तुलसी काव्य मीमांसा, प्रकाशक : राधाकृष्ण प्रकाशन, पृष्ठ 269

7 शुक्ल आचार्य रामचंद्र, भ्रमरगीत सार, प्रकाशक : लोकभारती प्रकाशन, पृष्ठ 107

8 भटनागर डॉ. रामरतन, सूर साहित्य की भूमिका, प्रकाशक : रामनारायण लाल, इलाहाबाद, पृष्ठ 212

9 शुक्ल आचार्य रामचंद्र, जायसी ग्रंथावली, सिंहलद्वीप वर्णन खंड, प्रकाशक : वाणी प्रकाशन, पृष्ठ 13

10 मिश्र विद्यानिवास, रहीम ग्रंथावली, प्रकाशक : वाणी प्रकाशन, पृष्ठ 81